वन व्यंजन उत्सव : एक शैक्षिक आयोजन

लता बतकू, अमित कोहली



साधना विद्यालय

महाराष्ट्र के पूर्वी छोर पर इन्द्रावती नदी से कुछ दूर एक छोटा-सा गाँव है, जिंजगाव। वहाँ एक सादा-सा प्राथमिक स्कूल है– साधना विद्यालय। इसे शुरू हुए तक़रीबन पाँच बरस हो गए हैं। स्कूल में विभिन्न जातियों-जनजातियों के आठ अलग-अलग भाषाएँ बोलने वाले विद्यार्थी साथ पढ़ते हैं। ये भाषाएँ हैं– मराठी, गोण्डी, माडिया, तेलुगु, महारी, मागदी, गोवारी और हलबी। महाराष्ट्र की प्रान्तीय भाषा मराठी है और स्कूल की माध्यम भाषा अँग्रेज़ी। इस तरह साधना विद्यालय की हर कक्षा 'बहुभाषीय कक्षा' है।

यह स्कूल अभी कक्षा चौथी तक है। इसकी दो कक्षाएँ पेड़ की छाँव में लगती हैं और दो कमरे में। आसपास के 12-15 किमी दायरे के तक़रीबन 12 गाँवों के बच्चे यहाँ पढ़ने आते हैं। पाँच किमी तक से आने वाले विद्यार्थियों को स्कूल की ओर से साइकिलें मुहैया कराई गई हैं और उससे आगे के गाँवों से आने वालों के लिए बस का इन्तज़ाम है।

परिवेश में मिलने वाली सामग्री ही शैक्षणिक सामग्री के तौर पर इस्तेमाल होती है, जैसे, मिट्टी से बनाए मोती और उनकी माला का उपयोग गिनती व स्थानीय मान सीखने और जोड़-घटाव करने के काम आता है। इसी तरह इमली वग़ैरह के बीज, लकड़ियों आदि का इस्तेमाल किया जाता है।

स्कूल में पढ़ने वाले सभी विद्यार्थी आर्थिक रूप से कमज़ोर परिवारों से आते हैं। यहाँ आसपास धान की खेती होती है और प्रमुख खाद्य पदार्थ चावल है। अधिकांश विद्यार्थियों के पालक दिहाड़ी मज़दूरी करते हैं। बच्चों से



चित्र : अमित कोहली

हमारा रिश्ता शिक्षक-विद्यार्थी का नहीं, बल्कि मैत्री का है।

परिसर अभ्यास

इस स्कूल में महाराष्ट्र राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल का सिलेबस अपनाया गया है और उसके द्वारा विकसित पाठ्यपुस्तकों के ज़रिए पढ़ाया जाता है। एक बार, पहली कक्षा में *परिसर अभ्यास* (Environment Studies) के एक पाठ 'Our Need for Food' पर बातचीत हो रही थी। हालाँकि यह पुस्तक तीसरी कक्षा से लागू होती है, लेकिन हम मानते हैं कि पहली-दूसरी कक्षाओं के विद्यार्थियों के बीच भी अपने आसपास के परिवेश के बारे में कुछ बुनियादी समझ और कई जिज्ञासाएँ व सवाल होते हैं। लिहाज़ा उनसे इस विषय पर बातचीत करना और उनकी समझ को विस्तार देना हम ज़रूरी मानते हैं। इसलिए तीसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक के कुछ पाठों और अवधारणाओं पर हम पहली और दूसरी कक्षा के विद्यार्थियों के साथ भी चर्चा करते हैं।

विद्यार्थियों के साथ बातचीत

'Our Need for Food' शीर्षक वाले पाठ में भोजन के बारे में बताया गया है। इसी विषय पर पहली कक्षा में बातचीत चल रही थी। खानपान की इस बातचीत में विद्यार्थियों को मज़ा आ रहा था। वे बढ़-चढ़कर बता रहे थे कि उनके घर में क्या-क्या पकता है और कौन-कौन से अनाज, कौन-कौन सी सब्ज़ियाँ व फल इस्तेमाल होते हैं। विद्यार्थियों ने बताया कि हमारे घरों में भात, अम्बाडी *(hibiscus sabdariffa)* का शाक और दाल ज़्यादा खाई जाती है। इन विद्यार्थियों ने आगे बताया कि भुनी हुई छोटी मछलियाँ और माँस भी हम काफ़ी खाते हैं। तक़रीबन हर भाजी में भुनी मछलियाँ और हर दाल में भुने माँस के छोटे-छोटे टुकड़े हम डालते हैं।

अम्बाडी के बारे में विद्यार्थियों ने बताया कि वह साल की तीनों ऋतुओं में हम खाते हैं। गर्मियों में पानी की कमी की वजह से ज़्यादा सब्ज़ियाँ नहीं उगाई जा सकती हैं, इसलिए ठण्ड के मौसम में जब मूँग, लोबिया *(vigne unguiculata)* वग़ैरह लगाते हैं, तब उसके साथ कुछ अतिरिक्त मात्रा में अम्बाडी भी बो दी जाती है। फिर उसके कोमल हरे पत्तों को पूरी तरह सुखा लिया जाता है और उसका चूर्ण बनाकर, साफ़ कपड़े में लपेटकर गर्मियों में खाने के लिए सुरक्षित रख लेते हैं।

अम्बाडी के बारे में विद्यार्थियों ने हमें बताया कि उस पौधे के हर हिस्से का उपयोग किया जाता है। पत्तों की भाजी तो होती ही है; उसके फूल की पंखुड़ियाँ काफ़ी खट्टी होती हैं, जिन्हें तरकारी या दाल में टमाटर के एवज में डाला



चित्र : अमित कोहली

जाता है। इन फूलों से चटनी भी बनती है जो दाल और भात के साथ खाई जाती है।

अम्बाडी का पौधा जब पूरी तरह बढ़ जाता है, तब उसे उखाड़कर धूप में सुखाते हैं। फिर उसके फूल से बीज और पंखुड़ियों को अलग कर लिया जाता है। मई में जब तेन्दूपत्ता तोड़ने का समय आता है, तब इन सूखी पंखुड़ियों से शरबत बनाकर पिया जाता है।

विद्यार्थियों ने बताया कि रोज़ाना के खाने में वे जंगल में पाई जाने वाली पत्तेदार शाक-भाजी का इस्तेमाल ज़्यादा करते हैं। जैसे– कायमुल, कडू भाजी, बोदी, बोनकी, गुहुक, मशरूम, कोडोळ *(bauhinia variegata)*, एमेल, रेला फुंगा *(cassia fistula)*, वाला फुंगार, किकेल, वदेल। इसके अलावा वे लोग बाँस के तने (bamboo shoots) की सब्ज़ी भी बनाते हैं। इस व्यंजन को गोण्डी में ‘कारकु’ और तेलुगु में ‘काँका चोकुल’ कहते हैं।



चित्र : अमित कोहली

त्यौहारों और विशेष अवसरों पर क्या पकता है? इस सवाल से विद्यार्थियों का जोश और बढ़ गया। उन्होंने न सिर्फ़ कई सारे व्यंजनों के नाम और उनमें लगने वाली सामग्री के बारे में बताया, बल्कि पकाने की विधियों का भी उत्साहपूर्वक वर्णन किया। इससे हमें समझ में आया कि त्योहारों पर बनने वाले व्यंजनों में गेहूँ के आटे का उपयोग अधिक होता है। यहाँ गेहूँ उगाया तो नहीं जाता, लेकिन सार्वजनिक वितरण प्रणाली के ज़रिए राशन की दुकानों पर मिलता है।

गेहूँ के आटे में स्वादानुसार शक्कर और पानी मिलाकर सान लेते हैं। उस साने हुए आटे के बड़े-बड़े गोले बनाकर उनसे बड़ी-सी रोटी बेली जाती है। स्टील के गिलास को उलटकर उसकी धार वाले सिरे से उस रोटी को मध्यम गोलाकार टुकड़ों में काट लिया जाता है। इन टुकड़ों को तेल में तलकर खाते हैं। इस पकवान को गोण्डी में ‘ग्लास हारी’, तेलुगु में ‘ग्लास रोट्या’ और महारी में ‘ग्लास भाकरी’ कहते हैं।

गेहूँ के आटे में स्वादानुसार नमक, मिर्च और हल्दी डालकर अच्छे-से सान लिया जाता है। फिर उसके छोटे गोले बनाए जाते हैं। उसके बाद एक पतीले में अन्दर की ओर तेल लगा दिया जाता है। अब आटे का वह गोला उस पतीले में रखकर हाथ से दबाते हुए उसे पतीले के आकार के अनुरूप बड़ा करते जाते हैं। आख़िर में वह पूरे पतीले का आकार ले लेता है। इसके बाद उसे तवे पर रखकर सेंका जाता है। इस व्यंजन को ‘गंज हारी’ कहते हैं। गोण्डी में पतीले को ‘गंज’ कहा जाता है।

गेहूँ के आटे को थोड़ा ज़्यादा गीला करके उसमें स्वादानुसार चीनी और चुटकीभर नमक डालकर दोसे की तरह का मिश्रण बनाया जाता है। उसे दोसे जैसा ही तवे पर फैलाकर सेंक लिया जाता है। इसे गोण्डी में ‘लीबिड हारी’ और महारी भाषा में ‘आटलू’ कहते हैं।

विद्यार्थियों ने बताया कि गर्मियों में जंगल से बहुत सारी चारोली *(buchanania lanzan)* बीनकर इकट्ठा की जाती है। उसे सुखाकर बीज निकाला जाता है और उन बीजों को गेहूँ के आटे में डालते हैं। थोड़ी चीनी और पानी



चित्र : अमित कोहली

मिलाकर उसे मुलायम सान लिया जाता है। चकले और बेलन की सहायता से इस आटे की रोटी बनाई जाती है और उसे तेल में तलकर खाते हैं। इस पकवान को गोण्डी में 'मेंजा हारी' कहते हैं।

चावल को कुछ देर पानी में भिगोकर रखा जाता है। उसके बाद किसी साफ़ कपड़े पर फैलाकर सुखाया जाता है। थोड़ा सूखने पर चावलों को ऊखल में कूटकर आटा बनाया जाता है। उसमें नमक और काले या फिर सफ़ेद तिल डालकर महीन सानते हैं। किसी भी उपकरण का इस्तेमाल न करते हुए सिर्फ़ हाथ की उँगलियों से उसे सर्पिल कुण्डली का आकार देते हैं। इस पकवान को गोण्डी भाषा में 'चाकलेख', तेलुगु में 'चाकन्याल' और महारी भाषा में 'चाकुल्या' कहते हैं।

गर्मियों के मौसम में चार-पाँच तरह के अनाजों को मिलाकर उनका आटा बनाया जाता है। उससे पेय बनाए जाते हैं। उसमें गोहुकू, गोमाल (गेहूँ), ओन्ना, मक्के (मक्का), नेल जोन्ना, जोन्ना, जोद्रे (ज्वारी), पारीक, बियाम, तान्दुर (चावल) आदि अनाजों को इकट्ठा करके हाथ से चलने वाली पत्थर की घट्टी (चक्की) पर पीसकर आटा बनाया जाता है। इस आटे को एक छोटे मटके में बहुत सारा पानी मिलाकर तीन-चार दिन तक ख़मीर उठने के लिए छोड़ दिया जाता है। जब उसमें से खट्टी गन्ध आने लगती है, तब मटके से आटे को निकालकर खौलते हुए पानी में बहुत देर तक उबाला जाता है और थोड़ा-सा नमक डाला जाता है। इस व्यंजन को गोण्डी में 'जावा', तेलुगु में 'आम्बेल', महारी भाषा में 'आम्बील' और गोवारी में 'पेयाला' कहा जाता है।

जब मक्का गीला होता है, तब भुट्टे से उसके दाने निकालकर सिलबट्टे पर महीन पीस लिए जाते हैं। इसमें चीनी डालकर एक मिश्रण बनता है। किसी साफ़ सूती कपड़े पर उस मिश्रण की छोटी-छोटी गोल चकतियाँ बनाकर रखी जाती हैं। फिर उसे तेल में तलकर खाते हैं। गोण्डी में इस व्यंजन को 'जोन्ना हारी', तेलुगु में 'मक्के गाऱ्याल' और महारी भाषा में 'मक्या वडे' कहते हैं।

सूखे मक्के के उपयोग के बारे में पूछने पर विद्यार्थियों ने बताया कि पूरी तरह सूख जाने के बाद मक्के के दाने निकाल लिए जाते हैं और हाथ से चलने वाली पत्थर की घट्टी (चक्की) पर पीसकर उनका आटा बनाते हैं। खौलते हुए पानी में उस आटे को डालकर काफ़ी देर तक पकाते हैं। इस दौरान कड़छी से उसे लगातार हिलाते रहना पड़ता है ताकि वह चिपक न जाए। इस तरह दलिया जैसा बन जाता है। इसे मूँग, लोबिया या वाल *(vicia faba)* की दाल के

साथ खाया जाता है। इस पकवान को गोण्डी में 'जोन्ना घाटो' और तेलुगु भाषा में 'घाटका' कहा जाता है।

कद्दू और गेहूँ के आटे के पकौड़े भी बनाए जाते हैं। अगर बाज़ार से लाया गया तेल पर्याप्त न हो तो महुए के बीज से बनाए तेल का इस्तेमाल तलने के लिए किया जाता है। इस तेल को 'गारा निई' कहते हैं।

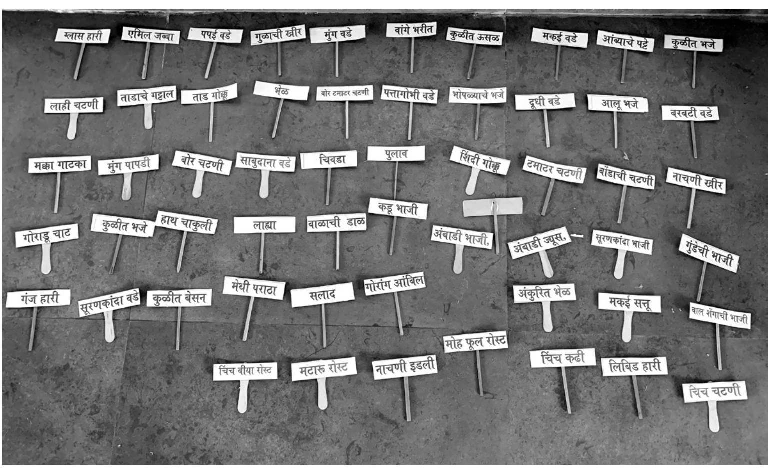
व्यंजनों के बारे में यह चर्चा बहुत मज़ेदार रही। इसमें बच्चों को अभिव्यक्ति के कई मौक़े मिले। कई विद्यार्थियों ने कुछ व्यंजन खाए थे, बनते हुए देखे भी थे, लेकिन उनके नाम पता नहीं थे। बातचीत के ज़रिए कई अनाजों, सब्ज़ियों, मसालों आदि के विभिन्न भाषाओं में नाम भी एक दूसरे से जानने को मिले। इस चर्चा में विद्यार्थियों को अपनी पसन्द-नापसन्द साझा करने के भी मौक़े मिले। कई दिनों तक यह सिलसिला चलता रहा। गोण्डी, तेलुगु, गोवारी, महारी भाषा बोलने वाले विद्यार्थी अपने सहपाठियों से पूछताछ करते रहते थे कि तुम इस चीज़ को क्या कहते हो या उस चीज़ को क्या कहते हो ?

उत्सव का विचार

पहली कक्षा के विद्यार्थियों के साथ यह बातचीत तक़रीबन एक हफ़्ते तक चली। स्कूल की साप्ताहिक बैठक में कक्षाध्यापिका ने इस रोचक चर्चा को अपने साथियों से साझा किया। बच्चों का प्रतिभाग सभी के लिए अनपेक्षित और उत्साहवर्धक था। साधना विद्यालय के शिक्षकों ने महसूस किया कि यह बातचीत अकादमिक रूप से भी उपयोगी है और इसे आगे बढ़ाया जाना चाहिए। उस बैठक में तय किया गया कि खाने के विषय पर अन्य कक्षाओं में भी बातचीत की जाए। इस तरह उसका विस्तार सभी कक्षाओं में हुआ। साथ ही, यह भी विचार किया जाने लगा कि सभी विद्यार्थियों को ये तमाम व्यंजन चखने को कैसे मिल सकते हैं!

पहला उपाय था कि विद्यार्थियों को टिफ़िन में व्यंजन लाने को कहा जाए। हालाँकि विद्यार्थियों को सुबह का नाश्ता और दोपहर का खाना स्कूल की तरफ़ से ही दिया जाता है, फिर भी कभी एकाध दिन टिफ़िन मँगवाया जा सकता था। फिर सवाल उठा कि आख़िर एक बच्ची अपने टिफ़िन में सबके लिए तो व्यंजन नहीं ला पाएगी! दूसरा विचार आया कि शिक्षक और विद्यार्थी मिलकर कोई दिन मुक़र्रर करके कुछ व्यंजन बनाएँ और मिलकर खाएँ। यह विचार अच्छा था, लेकिन इसमें दिक़्क़त यह थी कि जिन तमाम व्यंजनों का ज़िक्र विद्यार्थियों ने अपनी कक्षाओं में किया था, शिक्षकों को उनमें से कुछ ही बनाने आते थे। इसके समाधान के रूप में सोचा गया कि क्यों न पालकों का सहयोग लिया जाए!

सलाह और सहयोग लेने के लिए स्कूल में एक पालक सभा बुलाई गई। उसमें सभी विद्यार्थियों के पालकों ने उत्साह से सहमति जताई। पालकों से बातचीत में व्यंजनों की सूची थोड़ी और लम्बी हो गई। खाना पकाने के साथ



चित्र : अमित कोहली

कुछ पारम्परिक खेल और गतिविधियाँ करने की भी योजना बन गई। इस तरह चन्द पालकों की सहायता से एक आयोजन करने का विचार विकसित होकर 3 फरवरी, 2023 को 'वन व्यंजन उत्सव' के रूप में अमल में आया।

तैयारी

पालक सभा में 58 प्रकार के व्यंजनों की सूची बन गई थी। वहाँ 24 गाँवों के 21 समूह भी बने और उन समूहों ने व्यंजन सूची में से अपने लिए 1-2 पकवान बनाने की ज़िम्मेदारी भी ले ली। अभिभावकों की आर्थिक स्थिति को देखते हुए स्कूल प्रबन्धन ने तय किया कि तेल, चीनी, दाल जैसी महँगी सामग्री स्कूल द्वारा प्रदान की जाएगी। सब्ज़ियाँ, अनाज, मसाले, जलावन, वग़ैरह का इन्तज़ाम पालक अपने स्तर पर करेंगे।

विद्यार्थियों और शिक्षकों ने मिलकर उत्सव में शामिल होने वाले व्यक्तियों की अनुमानित संख्या निकाली। हर व्यंजन के लिए हर गाँव को क्या और कितनी सामग्री स्कूल से देनी है, इसका हिसाब किया गया। उत्सव के 2-3 दिन पहले यह सामग्री गाँव-गाँव जाकर बाँट दी गई।



चित्र : अमित कोहली

जिंजगाव के पास जंगल में एक बड़ा-सा तालाब है। वहाँ काफ़ी छायादार पेड़, ठण्डक और शान्ति है। इसलिए उसके किनारे यह उत्सव करना तय हुआ। गाँव के युवकों ने स्कूल के विद्यार्थियों और शिक्षकों के साथ मिलकर वहाँ सामूहिक श्रमदान किया। जहाँ ज़मीन ऊबड़-खाबड़ थी, उसे समतल किया गया। सूखे पत्तों और घास-फूस को झाड़कर खाना पकाने, बैठने, खेलने, वग़ैरह के लिए जगहें बनाई गईं।

खाना पकाने वालों के जो समूह बने थे, उनके लिए किसी पेड़ या पत्थर के पास जगह निर्धारित करके वहाँ सूचना-पट्ट लगाए गए। इन सूचना-पट्टों पर खाना बनाने वाले पालकों के नामों के साथ-साथ गाँव और व्यंजनों के नाम भी लिखे थे।

खाना पकाने, पीने और बर्तन धोने के लिए पानी गाँव से ढोकर लाना था। उसके लिए ट्रैक्टर, ट्रॉली और ड्रमों का इन्तज़ाम जिंजगाव की ओर से किया गया। कचरा जमा करने और उसके निपटारे के लिए भी बच्चों और शिक्षकों ने मिलकर इन्तज़ाम किया। प्लास्टिक-पॉलिथीन का निषेध था। खाना खाने और अन्य इस्तेमाल के लिए पालकों से ही कहा गया था कि वे पाँच-सात दोने और पत्तल साथ लेकर आएँ, ताकि उनके साथ-साथ मेहमानों की भी व्यवस्था हो जाए। जो लोग मोटरसाइकिल से आने वाले थे, उनके लिए कुछ दूरी पर पार्किंग का इन्तज़ाम था। विद्यार्थियों और शिक्षकों के समूह ने सफ़ाई, कचरा प्रबन्धन, जलापूर्ति, खाद्य सामग्री वितरण, खेल आयोजन, सजावट जैसे विभाग आपस में बाँट लिए थे। हर समूह में एक-एक शिक्षक और बालवाड़ी से चौथी तक के विद्यार्थी शामिल थे।

आयोजन

सुबह आठ बजे के दरमियान अधिकांश पालक तालाब किनारे पहुँच गए थे। वे अपने साथ उनके विशेष व्यंजन पकाने की सामग्री तो लाए ही थे, साथ ही ज़रूरत के मुताबिक़ बर्तन भी लाए थे। घूम-घूमकर उन्होंने अपना नियत स्थान खोजा। विद्यार्थियों ने उनकी मदद की। आसपास से पत्थर लाकर चूल्हे बनाए और जंगल से सूखी लकड़ियाँ चुनकर उन्हें सुलगाया गया।

अपने-अपने चूल्हों के पास लोग चटाई पर बैठकर प्याज़ काटने, आटा सानने, सब्ज़ियाँ साफ़ करने जैसे काम कर रहे थे। कुछ लोग यों ही चटाइयों पर सुस्ता रहे थे और कुछ जिज्ञासु अन्य समूहों के पास जाकर पूछताछ कर रहे थे कि वे क्या बना रहे हैं, कैसे !

कुछ देर में शिक्षकों और अभिभावकों ने मिलकर कुछ खेल खेले। इनमें दौड़, निशानेबाज़ी और कुछ अन्य सामूहिक खेल शामिल थे। इसके बाद सबने खाना खाया।



चित्र : अमित कोहली

हमने क्या सीखा ?

साथ खाना बनाने और खाने के आयोजन के पीछे के विचार और उसे कार्यान्वित करने की पद्धति में हमने पाठ्यचर्या और उसके आसपास के कुछ तत्त्वों को समाहित करने की कोशिश की। खाना हमारे लिए रोज़मर्रा की बात तो है, लेकिन जब हम त्योहारों और विशेष मौक़ों पर बनने वाले व्यंजनों की बात करते है, यह इतनी आम बात नहीं होती। विविध संस्कृतियों के लोग अपने पर्वों, त्योहारों और विवाह के अवसरों पर विविध प्रकार के व्यंजन बनाते हैं, न सिर्फ़ उनका स्वाद और रंग-रूप, बल्कि उन्हें खाने का तरीक़ा भी ख़ास होता है।

हफ़्तों पहले योजना बनाना, तैयारियाँ करना, ज़िम्मेदारियाँ बाँटना, ज़िम्मेदारियाँ उठाना, मिलकर काम करना, सहयोग माँगना और सहयोग करना, मौक़े पर पेश आने वाली समस्याओं को हल करना, आयोजन की जगह का चयन करना, आने वाले लोगों की अनुमानित संख्या का गुणा-भाग करके तय करना कि आयोजन के लिए कितनी जगह चाहिए होगी, व्यंजनों की सूची बनाना, खाना बनाने वाले समूहों का निर्माण करना, जोड़-घटाव और प्रमाण-अनुपात करते हुए संख्याएँ निकालना कि दाल, तेल, चीनी और गोरांग *(Raagi, eleusine coracana)* कितना लगेगा, मेहमानों की सुविधा के लिए सूचना-पट्ट बनाना और उन्हें यथास्थान लगाना, उससे पहले यह भी सोचना कि कौन-कौन से सूचना-पट्ट बनाने होंगे, कचरे का व्यवस्थापन, सजावट की योजना, डिज़ाइन, ताड़ के पत्तों के छल्ले बनाना... यह सूची अन्तहीन प्रतीत होती है।

यह सब शिक्षकों और विद्यार्थियों ने मिलकर और बहुत मज़े से किया।

इसमें विद्यार्थियों को कई तरह के अनुभव मिले। उन्होंने कला, भाषा, गणित, परिसर अभ्यास के कुछ सबक़ भी प्रत्यक्ष तौर पर सीखे। किताब में जिस पर्यावरण सन्तुलन की बात होती है, वह जिंजगाव के आसपास के जंगल में नज़र आता है क्या, इसपर बात हुई। खाना पकाने की जगह साफ़ करते हुए किताब में सिखाए क्षेत्रफल को उन्होंने अपनी आँखों के सामने देखा। सजावट के काम में पैटर्न, सौन्दर्यबोध और कला तो थी ही, सूचना-पट्ट बनाने और लगाने के क्रम में थोड़ा-सा भाषा शिक्षण भी हो गया।

लता बतकू विगत पाँच वर्षों से लोक बिरादरी प्रकल्प द्वारा संचालित साधना विद्यालय में शिक्षिका के तौर पर कार्यरत हैं। वे बालवाड़ी और पहली कक्षा के विद्यार्थियों को पढ़ाती हैं। इन्हें बच्चों के साथ खेलना, नाचना और भाषा-गणित की गतिविधियाँ करना पसन्द है।

अमित कोहली घुमक्कड़ी करने और पढ़ने के शौक़ीन हैं। तक़रीबन 15 साल एकलव्य फ़ाउण्डेशन के साथ विविध स्तरों पर काम किया है। शिक्षा के इतिहास, डिस्कूलिंग एवं वैकल्पिक शिक्षा में विशेष रुचि है। अमित स्वयं को वैचारिक रूप से गाँधीजी के क़रीब पाते हैं।

सम्पर्क : amt1205@gmail.com